**ओ३म्**

**‘महात्मा बुद्ध ईश्वर में विश्वास रखने वाले आस्तिक थे?’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

महात्मा बुद्ध को उनके अनुयायी ईश्वर में विश्वास न रखने वाला नास्तिक मानते हैं। इस सम्बन्ध में आर्यजगत के एक महान विद्वान पं. धर्मदेव विद्यामार्तण्ड अपनी प्रसिद्ध पुस्तक **“बौद्धमत एवं वैदिक धर्म”** में लिखते हैं कि **आजकल जो लोग अपने को बौद्धमत का अनुयायी कहते हैं उनमें बहुसंख्या ऐसे लोगों की है जो ईश्वर और आत्मा की सत्ता से इन्कार करते हैं तथा वेदों की निन्दा करते हैं।** माननीय डा. भीमराव अम्बेदकर भी जिस बौद्धमत के प्रचार के लिए प्रयत्नशील थे उसमें भी बौद्धमत का ऐसा ही नास्तिक स्वरूप माना जाता है, किन्तु **बौद्ध ग्रन्थों के निष्पक्ष अनुशीलन करने पर वह (पं. धमदेव विद्यामार्तण्ड) इस परिणाम पर पहुंचें हैं कि महात्मा बुद्ध ईश्वर की सत्ता से सर्वथा इनकार करनेवाले और वेदों की निन्दा करने वाले न थे, प्रत्युत आस्तिक थे।** एक बड़ी कठिनाई महात्मा बुद्ध के यथार्थ विचार जानने में यह है कि उन्होंने स्वयं कोई ग्रन्थ नहीं लिखा अब दीघनिकाय, मज्झिनिकाय, विनयम पिटक आदि जो भी ग्रन्थ महात्मा बुद्ध के नाम से पाये जाते हैं उनका संकलन उनके निर्वाण की कई शताब्दियों के पश्चात् किया गया जिनमें से बहुत-सी उक्तियां किंवदन्ती के ही रूप में हैं।

**मनमोहन कुमार आर्य**

 नास्तिक कौन होता है? इस प्रश्न को उठाकर उसका समाधान करते हुए आर्यविद्वान पं. धर्मदेव जी कहते हैं कि अष्टाध्यायी के **‘अस्ति नास्ति दिष्टं मतिं’** इस सुप्रसिद्ध सूत्र के अनुसार जो परलोक और पुनर्जन्म आदि के अस्तित्व को स्वीकार करता है वह आस्तिक है और जो इन्हें नहीं मानता वह नास्तिक कहाता है। महात्मा बुद्ध परलोक और पुनर्जन्म को मानते थे इससे कोई इन्कार नहीं कर सकता। इसलिये उन्हें सिद्ध करने के लिए अनेक प्रमाण देना अनावश्यक है। प्रथम प्रमाण के रूप में धम्मपद के जरावग्गो श्लोक (संख्या 153) **‘अनेक जाति संसारं, सन्धाविस्सं अनिन्विस। गृहकारकं गवेस्संतो दुक्खा जाति पुनप्पुनं।।’ में महात्मा बुद्ध ने कहा है कि अनेक जन्मों तक मैं संसार में लगातार भटकता रहा। गृह निर्माण करनेवाले की खोज में। बार-बार जन्म दुःखमय हुआ।** श्लोक का यह अर्थ महाबोधि सभा, सारनाथ-बनारस द्वारा प्रकाशित श्री अवध किशोर नारायण द्वारा अनुदित धम्मपद के अनुसार है। दूसरा प्रमाण ब्रह्मजाल सुत्त का है जहां महात्मा बुद्ध ने अपने 2 या 4 नहीं अपित लाखों जन्मों के चित्तसमाधि आदि के द्वारा स्मरण का वर्णन किया है। वहां उन्होंने कहा है--भिक्षुओं ! कोई भिक्षु संयम, वीर्य, अध्यवसाय, अप्रमाद और स्थिर चित्त से उस प्रकार की चित्त समाधि को प्राप्त करता है जिस समाधि को प्राप्त चित्त में अनेक प्रकार के जैसे कि एक सौ, हजार, लाख, अनेक लाख पूर्वजन्मों की स्मृति हो जाती है—**“मै। इस नाम का, इस गोत्र का, इस रंग का, इस आहार का, इस प्रकार के सुखों और दुःखों का अनुभव करनेवाला और इतनी आयु तक जीनेवाला था। सो मैं वहां मरकर वहां उत्पन्न हुआ। वहां भी मैं इस नाम का था। सो मैं वहां मरकर यहां उत्पन्न हुआ।“** इत्यादि। अगला तीसरा प्रमाण धम्मपद के उपर्युक्त वर्णित श्लोक का अगला श्लोक है जिसमें गृहकारक के रूप में आत्मा का निर्देश किया गया है। श्लोक है- **’गह कारक दिट्ठोऽसि पुन गेहं न काहसि। सब्वा ते फासुका भग्गा गहकूटं विसंखितं। विसंखारगतं चित्तं तण्हर्निं खयमज्झागा।।‘** इस श्लोक के अनुवाद में इसका अर्थ दिया गया है कि हे गृह के निर्माण करनेवाले! मैंने तुम्हें देख लिया है, तुम फिर घर नहीं बना सकते। तुम्हारी कडि़यां सब टूट गईं, गृह का शिखर गिर गया। **चित्त संस्कार रहित हो गया, तृष्णाओं का क्षय हो गया।** इस पर टिप्पणी करते हुए पं. धर्मदेव जी कहते हैं कि **यह मुक्ति अथवा निर्वाण के योग्य अवस्था का वर्णन है। जब तक ऐसी अवस्था नहीं हो जाती तब तक जन्म-मरण का चक्र चलता रहता है। इस प्रकार यह सर्वथा स्पष्ट है कि महात्मा बुद्ध परलोक, पुनर्जन्म आदि में विश्वास करने के कारण आस्तिक थे।**

 महात्मा बुद्ध के आस्तिक होने से संबंधित अगला प्रश्न यह है कि **क्या वह अनीश्वरवादी अर्थात ईश्वर में विश्वास न रखने वाले थे?** इसका समाधान करते हुए पं. धर्मदेव जी लिखते हैं कि नास्तिक शब्द का एक प्रचलित अर्थ ईश्वर की सत्ता से इन्कार करनेवाले का है। क्या महात्मा बुद्ध ईश्वर की सत्ता से इन्कार करनेवाले थे इस विषय में अपने विचार संक्षेप से माननीय डा. अम्बेदकर जी से बात-चीत के प्रसंग में (संदर्भः सार्वदेशिक जुलाई 1951 अंक) प्रकट कर चुका हूं। इस विषय पर कुछ अधिक प्रकाश डालने से पूर्व मैं **‘सन्त सुधा’** के सम्पादक श्री ईश्वरदत्त मेधार्थी अणुभिक्षु बुद्धपुरी कानपुर के लेख से कुछ उद्धरण देना उचित समझता हूं। **‘सन्त सुधा’** के बुद्ध जयन्ती अंक में **‘सन्त सिद्धार्थ’** शीर्षक से महत्वपूर्ण अपने लेख में श्री मेधार्थी ने लिखा है कि ब्रह्म के विषय में भगवान बुद्ध स्वयं कहते हैं—**“ब्रह्मभूतो अतितुलो मारसेन प्पमद्दनो। सब्वा मित्ते बसीकत्वा, मोदामि अकुतोभयो।।“** **अर्थात् --मैं अब ब्रह्म पद को प्राप्त हुआ हूं, मेरी तुलना अब किसी से नहीं है, मैंने मार (कामदेव) की सेना को मर्दित कर दिया है। अब मैं काम, क्रोध आदि सब अन्तः शत्रुओं को वश में करके निर्भय होकर मस्त हो रहा हूं। विद्वान लेखक पं. धर्मदेव इस पर टिप्पणी करते हुए कहते हैं कि यह एक ही वचन भगवान बुद्ध की आस्तिकता और ब्रह्मपद प्राप्ति के लिये पर्याप्त है। जरा-सी समझने की बात है कि जो स्वयं ब्रह्मविहार करता हो, ब्रह्मचारी हो, ब्रह्मभूत हो (यह सम्भव ही नहीं है कि) वह ब्रह्म को न माने? वास्तव में बौद्ध साहित्य में निर्वाण, ब्रह्म, अमृतपद, परमसुख, उत्तम अर्थ, अनाष्यात, दुलर्भनाथा आदि शब्द एकार्थवाचक हैं।**

 जिज्ञासुओं को भ्रम में नहीं पड़ना चाहिये। **भगवान बुद्ध ने स्वयं कहा है--जो नास्तिक हैं उन्हें विनाशोन्मुख समझो।** एक बात है--**भगवान् बुद्ध आस्तिक तो थे ही, आर्य भी थे।** आर्य शब्द से उन्हें बड़ा प्रेम था। चार आर्य सत्य, आर्य, अष्टांगिक मार्ग और आर्यश्रावक तो बहुत प्रसिद्ध हैं। आर्य शब्द गुणवाची है। आर्य शब्द का अर्थ है श्रेष्ठ। इसलिये श्रेष्ठता, उच्चता, और उत्तमता की भावना के लिये **‘आर्य शब्द’** भगवान बुद्ध ने प्रयोग किया है। इसीलिये बुद्धपरी में आस्तिकता और अहिंसकता की श्रेष्ठ भावना को पुष्ट करने के लिये **‘आर्य बौद्ध’** शब्द का प्रचार किया जाता है। भगवान बुद्ध ने भी धम्मपद में स्वयं कहा है--**’न तेन अरियो होति, येन पाणानि हिंसति। अहिंसा सबपाणानं, अरियोति पवुच्चति।।‘ (**धम्मपद श्लोक 270, धम्मट्ठवग्गो 15) अर्थात् प्राणियों का हनन कर कोई आर्य नहीं होता, सभी प्राणियों की हिंसा न करने से उसे आर्य कहा जाता है। (सत्नसुधा कानपुर बुद्ध जयन्ती अंक मई 1950 पृष्ठ 10-11)। लेखक महोदय कहते हैं कि आचार्य मेधार्थीजी का उपर्युक्त लेख महत्वपूर्ण है क्योंकि उन्होंने बौद्ध ग्रन्थों का विशेष अनुशीलन करके उसे लिखा है और वे अपने को आर्य बौद्ध नाम से ही कहते हैं। पत्रिका सन्त-सुधा के मई 1950 अंक में आर्य बौद्ध संघ बुद्धपुरी के कुलगुरू श्री ज्ञानक्षेत्रजी की एक सूक्ति भी प्रस्तुत की गई है। यह सूक्ति है ”You will find so many Bhikshoos coming here (in Buddha Puri). They are the enemies of Om; but you will never leave Om, every thing is in Om, Lord Buddha is also in Om.” अर्थात् यहां बुद्धपुरी में आप कई भिक्षुओं को आते हुए पाते हैं जो ओम् (परमात्मा) के शत्रु या विरोधी हैं किन्तु आपको ओम् का परित्याग कभी नहीं करना चाहिये। सब कुछ ओम् में है। बुद्ध भगवान् भी ओम् में हैं।

 बुद्धत्व की प्राप्ति के पश्चात् अपने प्रथम ही उपदेश में जो सारनाथ में महात्मा बुद्ध जी ने दिया उसमें उन्होंने कहा—**“अहं भिक्खवे! तथागत सम्मासम्बुद्धो उदूहथ भिक्खवे। सोतं अमतं अधिगतम् अहमनुसासामि अहं धर्म्म देसेमि।“** अर्थात् भिक्षुओं ! मैं अब बुद्ध हो गया हूं। मैंने **‘अमृत’** की प्राप्ति कर ली है। अब मैं धर्म का उपदेश करता हूं। **पं. धर्मदेव जी कहते हैं कि अमृत नाम वेद और उपनिषदों में ब्रह्म अर्थात् ईश्वर के लिए प्रयुक्त हुआ।** इसके उदाहरण भी आपने दिये हैं। धम्मपद श्लोक 160 (अत्तवग्गो 4) **“अत्ताहि अत्तनो नथो को हि नाथो परो सिया अत्तनां व सुदन्तेन, नाथं लभति दुल्लभं।।“** में ईश्वर की सत्ता को महात्मा बुद्ध स्पष्ट रूप से स्वीकार करते हुए कहते हैं कि आत्मा ही आत्मा का नाम है और कौन उस (परमात्मा) से बड़ा नाथ व स्वामी हो सकता है। अच्छी प्रकार आत्मा का दमन कर लेने से दुर्लभ नाथ (परमात्मा) की प्राप्ति होती है। **‘नाथं लभति दुल्ल्भं’** यह शब्द अत्यन्त स्पष्टरूप से दुर्लभ नाथ (परमात्मा) का निर्देश करते हैं। यद्यपि अनीश्वरवादी आधुनिक बौद्ध इसका अर्थ निर्वाण कर देते हैं जो संगत नहीं होता और जिसमें खींचा-तानी भी बहुत अधिक करनी पड़ती है।

उपर्युक्त विवरण से सिद्ध है कि महात्मा बुद्ध ईश्वर विश्वासी व आस्तिक थे, अनीश्वरवादी नहीं।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**